Hembram
20-03-2020
Asst. Professor
Department of Santali
VIDYASAGAR UNIVERSITY
MIDNAPORE-721102, W.B.

Early Santals Traditional Culture - By Dr. Ratan Hembram
13-05-2017

आदिक संताल का पारंपरागत संस्कृति

संताल भारत का एक प्राचीन जनजातियों में से एक है। भारत में संताल गोण्ड, भील के बाद तीसरी अधिक जनजातियों में से एक है परन्तु सांस्कृतिक दृष्टियों में देखा जाय तो भारत में अन्य सभी जनजातियों में से प्रथम स्थान रखता है। हमारे भारतवर्ष में जनजातियों की संख्या भाषायिक आधार पर देखा जाय तो लगभग 750 से 800 के लगभग हैं। कई जनजातियाँ क्रमिक लुप्त होती जा रही हैं। भारत में संताल जनजातियों की संख्या भारतीय जनगणना 2001 के अनुसार-64,69,660 के लगभग है तथा 2011 की जनगणना के अनुसार 70,00,000 के लगभग होंगे। बोली या भाषायिक आधार पर देखा जाय तो ये लगभग 1 करोड़ से अधिक होंगे। विदेश में संताली भाषा, साहित्य, संस्कृतियों की चर्चा कई देशों में रही है। अंग्रेजों के भारत आगमन के समय या ब्रिटिश मिशनरियों के द्वारा संताली भाषा, साहित्य, संस्कृति पर 300 के लगभग पुस्तकें या लेख आदि छोड़ कर गये हैं या यहाँ से इतनी सारी पुस्तकें लिखकर अपने देशों में ले गये हैं। इससे ये विदित होता है कि उन सब देशी-विदेशी विद्वानों का चस्का भारत के संताल जनजाती की भाषा, साहित्य संस्कृति, परम्पराएँ, खान-पान, रहन-सहन, वेश-भूषा सारा सब कुछ अपने साथ संग्रह कर अपने-अपने देशों को ले गये हैं।

संताली भाषा, साहित्य, संस्कृति भारत के बिहारी, बंगाली, उड़िया एवं कई अन्यों विद्वानों को भी आकृष्ट करते रहे हैं। भारत के अधिकांश विद्वान इनके जीवन-परम्पराएँ आदि से अवगत किसी न किसी रूप में रहे हैं। वे सारे विद्वान-बुद्धिजीवी जन किसी न किसी रूपों में इनके विभिन्न पक्षों को लेकर अपनी ओर आकृष्ट करते रहे हैं।

संताल जनजाती भारत के बिहार, झारखण्ड, उड़ीसा, पश्चिम बंगाल, असम आदि प्रान्तों में सघन रूपों में विद्यमान हैं। विरल रूपों में सम्पूर्ण भारतवर्ष में ही नौकरी, पेशा के रूप में फैले हुए हैं। भारत से बाहर नेपाल एवं बंगलादेश में अभी भी वहाँ 3-3 लाख के लगभग संताल जनसंख्या अभी भी मौजूद है।

धार्मिक दृष्टि से संताल जनजातियों का सबसे ज्यादा खींचाव ईसाई, हिन्दू, मुस्लिम की ओर हुआ है पर संताल आदिकाल से अब तक अर्थात अपना पूर्व जन्मस्थल 'हिहिड़ी-पिपिड़ी' (मिश्र देश-आफ्रिका या अफ्रिका, एशिया एवं यूरोप के भूमध्य भूभाग या भूमध्य सागरीय क्षेत्र से हाराता (अरारात), सासांबेडा (लोहित सागर), मिसोपोटामिया (ईराक-ईरान),

उत्तर-पश्चिम भू भाग होते हुए, आज से 5/6 हजार या 50/60 लाख वर्ष पूर्व हिमालय के खईबारपास एवं बुलानगीरी पास (दर्रा) होते हुए प्रवेश किये थे। ये ईशापूर्व 1500 के पूर्व में भारत के वर्तमान पाकिस्तान या सिन्धुघाटी सभ्यता पंजाब-सिन्ध क्षेत्र में काफी लम्बी अवधि तक अवस्थित थे। कालक्रम में ये गंगा नदी के किनारे-किनारे होते हुए पूर्व की ओर बढ़े थे इसी कारण ये भारत के पुर्वोत्तर भागों में भी पाये जाते हैं। ये गंगा नदी को भागलपुर - बर्दमान के आसपास उधर से इधर यानी मिदनापुर (पूर्व मिदनापुर), बांकुड़ा, पुरुलिया, मयूरभंज, क्योंझोर, ढेंकानाड़, नालको, बिहार/झारखंड के सिंहभूम, हजारीबाग, धनबाद, बकारो, गिरिडिह, पुरानी दुमका (मिहिजाम, जामताड़ा, देवघर, जमशेदपुर, पाकुड़, गोड्डा साहेबगंज) आदि जिलों में दो हजार वर्ष पूर्व से ही रहते आये हैं ये भू भाग जंगल-पहाड़ों से घिरा हुआ या जंगल-पहाड़ों के बीच में अवस्थित है। इस क्षेत्र में ये संताल जनजाति अपने आप को बचाये रखने के लिए या अपनी भाषा, साहित्य, संस्कृति को अक्षुन्न बनाये रखने के लिए जंगलों में घुसकर रहने लगे हैं। ये संताल जनजाती दिकु-मुसलमानों के डर से हो या अपनी भाषा, साहित्य, संस्कृति को बचाए रखने के डर से जंगल-जंगलों में अपने आप को आदिकाल से अब तक साधु जन या सिधा-सादा जीवन-यापन करने वाला ईर्षा-द्वेष से मुक्त स्वच्छंद वातावरणों वे विचरन करते रहे हैं। वे हिन्दू, मुस्लिम, सिख, ईशाई, बुद्ध, जैन आदि धर्मों से भिन्न अपनी अलग भाषा, साहित्य, संस्कृति, धर्म, परम्पराएं, पेशा आदि को आदिकाल से अब तक जस का तस बनाये रखे हैं।

अब तक अर्थात इस ईक्कीसवीं सदी में भी संताल जनजातियाँ जहाँ कहीं भी रहे हो मूल रूप से एक ही जैसा हैं। उनका अपना मूल धर्म वंश एवं जाति के आधार पर 'खेरवाल' (Kherwal) रहा है अब उससे विकृत होकर कई धर्मों के नाम से भी जाने जाते हैं। अभी 'फुट-डालो राज' के वजह संताल धार्मिक द्वीक्षे में

कई प्रकार की विकृतियाँ पनपने लगी है। कोई 'सारना' तो कोई 'सारी धरम' तो कोई 'सारी-सारना', कोई 'विदिनधर्म' तो कोई 'बुकड़ी', 'गुरुबाबाहार', सनातन, साफा, 'खुमीबाबाहार' आदि धर्मों में विभक्त कर दिया गया है।

संताल आदिकाल से अब तक अपने आप को 'हड़' या 'होड़' शब्द से कहते आये हैं। वे प्राचीन काल से अबतक 'वसुधैव कुटुम्बकम्' अर्थात सम्पूर्ण धरती के मानव समूह मात्र को अपना परिवार मानते हैं। जब से इन पर छिन्ना-झपटी, दंगा-फसाद, अपनी ओर खींचातानी करता गया तब से अपने आप को सुरक्षित रखने का यथाक्रम प्रयास करते आये हैं। संताल कोई 'संथाल' कहता तो कोई 'सोंवताल' कहता है संताल अपने आप को 'हड़' या 'सान्ताड़ हड़' कहना अधिक पसंद करते हैं। संताल को संताल नामकरण सर जॉन शोर (Sir John Shore) के द्वारा 1795 ई० या फेड्रिक साहब के द्वारा 1818 ई० को नाम दिया गया है और इसे यह नामकरण संत-साधु प्रकृति के कारण दिये हैं।

संताल को कालक्रम में किसी ने 'आदिवासी' तो किसी ने 'Aboriginal Tribe' तो भारत सरकार ने इसे 'अनुसूचित जनजाति' की सूची में से एक उपजाति माने हैं। किसी ने इसे 'जंगली' तो किसी ने 'वनवासी' तो किसी ने 'निषाद' किसी ने 'वानरसेना', 'अछूत', 'शूद्र' आदि उपनाम देते गये हैं।

संताल अपनी भाषा को 'होड़/हड़ रड़ (रोड़)' बोलते आये हैं। जिसे बोली के रूप में माना जाता है। आजकल अर्थात बीसवीं या इक्कीसवीं सदी में संताल अपनी भाषा को 'पारसी' नाम दिया गया है। अपनी साहित्य को 'हड़/होड़ सोंवहेत' नाम दिया है। अपनी संस्कृति को 'लेरचाल' या 'लोकचार' नाम दिया है। 'लेरचाल या लोकचाल' का शाब्दिक अर्थ परंपरिक रीति या पद्धति का हस्तान्तरण कहा गया है। संताल संस्कृति से अभिप्राय संताल लेरचाल अर्थात संताल द्वारा अपनी रीति-रिवाज, प्रथाओं का हस्तान्तरण से है। ये अपनी सभ्यता या कुरूपा को 'सोसनोक' नाम दिया है। कुप्रथाओं को 'कोसनग' कहा है। रेव० पी० ओ० बोडिंग साहब तो इनकी भाषा, साहित्य, संस्कृति पर काफी अधिकमोहित

होकर अपना सम्पूर्ण जीवन ही इसकी साधना में लगा दिये थे। ये बोडिंग साहब भारत में प्रवास के दौरान अर्थात् वे अपने जीवन के 44 वर्षों की प्रवास के समय चौवालिस के लगभग संताल संबंधी पुस्तकें रचकर संताली भाषा-साहित्य व संस्कृति को सजीवन का काम किये हैं। कई अंग्रेज विद्वान एवं भारतीय विद्वान भी इसके साथ-साथ इनके गूढ़ रहस्यों पर गोता लगाते रहे हैं। कई भारतीय बंगाली, बिहारी, उड़िया विद्वान ने भी इसके रहस्यों का चस्का लेने के लिए यहाँ तक भी कह डाले हैं कि— "Santali is the base of world language" काफी समीचिन प्रतीत हुआ है। इनकी अपनी कई भाषायिक, साहित्यि व सांस्कृतिक विशेषताएँ काल क्रम में कई प्रकार के झंझावतों, संकटों, विनाशकारी विभिषिकाओं आदी के बीच में हिलोरे लेते रहे हैं। संताल संस्कृति अपने आप में इतनी धनी है कि सभी प्रकार की विघ्न-बाधाओं को पार करते हुए हिरा-मोती-सोना जैसा अब जगमगाने लगे हैं। आज उसे देखकर इनके विपरित पल-बढ़ रहे दिकुओं के लोग ईर्षा-द्वेष, दंगा-फसाद बारंबार षड़यंत्र रचकर हानि या समाप्त करना चाहते हैं।

इस ब्रह्माण्ड में जब तक तारे, सूर्य, पृथ्वी, चन्द्र ग्रह-नक्षत्र बने रहेंगे तब तक संताल भी इनके उपासक के रूप में इस संसार में मौजूद बने रहेंगे। संताल अपनी इष्ट देवों के रूप में इन्हीं सब ब्रह्माण्ड के महाशक्तियों के उपासक आदिकाल से अब तक बने हुए हैं। संताल प्राकृतिक व्यक्ति है। वे प्रकृति के पुत्र-पुत्री हैं। प्रकृति ही अपना जीवन है, प्रकृति में ही रहना पसन्द करते हैं। प्राकृतिक शक्ति ही अपना जीवन आधार है। ये ~~और~~ ब्रह्माण्ड, तारे, सूर्य, पृथ्वी, चन्द्र, ग्रह-नक्षत्रों, पहाड़-पर्वत, जंगल-डुँगरी, टीला, नाला, नदी, महानदी, ~~और~~ गड्ढा, पोखरा, बाँध, नाला, नदी, महानदी वृहत जलाशय, कृत्रिम कुआँ, कुँआ, डाड़ी आदियों को भी अपना इष्ट देव आदिकाल से अब तक मनाते एवं सेवा-सुश्रुषा करते आये हैं एवं आगे भी करते रहेंगे। वे अपनी आदिकाल से अब तक विविध कोटियों जीव-जन्तुओं के बीच में रहकर एवं प्राकृतिक शक्तियों के साथ सामंजस्य स्थापित करते आये हैं। वे अपने घात-

संताल हर घड़ी प्राकृतिक नियमों का पालन करते आये हैं। आधुनिक वैज्ञानिक या विज्ञान व्यक्ति प्राकृतिक नियमों से नियम हटकर अपनी विपरित नियम अपना रहे हैं और विनाश के कगार पर आने का राह बना डाले हैं। प्राकृतिक शक्ति के विपरित अपना महाशक्ति रचकर अपना मानव समुदायों को ही खत्म करने का नीति, नियम, योजना पर योजना बनाते जा रहे हैं और उन सबों का विनाश अवश्यमभावी है। प्राकृतिक हवा, जल, जंगल, जमीन पर हम कितना ही खिलवाड़ करले, हम अपना विनाश अपने ही गढ़ते, रचते, बनाते जा रहे हैं और निकट भविष्य में ही हम अपना मानव जीवन लीलाओं को उजाड़ने में लगे हुए हैं। प्राकृतिक नियम के विपरित हम चाहे जितना भी सुख भोग लें हम भी "पालोई" कीड़ा जैसा क्षण भंगुर जीवन जीयेंगे।

संताल का मुख्य पेशा आदि काल से प्राकृतिक संतुलन हेतु शिकार एवं कृषि-खेतीबारी को अपनाये हुए है। आज जितनी भी अट्टालिकाएँ हम बना लें, प्राकृतिक आपदाएँ क्षणभर में नष्ट कर देंगे। हम प्राकृतिक शक्तियों से किसी भी रूपों में उनसे आगे बढ़ नहीं निकल पायेंगे। यदि कभी कोशिश भी किया गया तो विनाश भी हमारे- आगे- पीछे किसी न किसी रूपों में दिखाई देगी।

वर्तमान परिस्थिति में हम प्राकृतिक मानव संताल या संताल तर इतर जातियों के विनाश को लेकर जो कुछ भी करेंगे वह हम सारे मानव अर्थात धरती के सारे मानव प्रभावित होंगे या नष्ट होकर सारे- के सारे खत्म हो जायेंगे। क्या भला है कि हम मानव आपस में लड़कर मर जायें अच्छा है या प्राकृतिक वातवरणों का निर्माण कर आपसी सहयोग करें। अब यदि हम आपस पर किसी न किसी मानव से लड़ेंगे तो सबका खत्म होना सुनिश्चित है। अतः अब इस विषम परिस्थिति में एक दूसरे से न लड़कर एक दूसरे का सहयोग करें। यदि हम आपस पर कोई भी लड़ेंगे तो एक न एक दिन आपसी लड़कर मर जायेंगे। इन्हीं सब कारणों से संताल प्राकृतिक शक्ति को ही अपना आराध्य देव मानकर वर्ष बार वर्ष प्राकृतिक नियमों का पालन करते आये हैं।

संताल में आदिकाल से अपनी स्वतंत्र शासन व्यवस्था अर्थात प्रजातान्त्रिक शासन व्यवस्था है अक्षुण्ण रूप से चलते आ रहे हैं। एक तरफ गाँव के प्रजा अर्थात साधारण लोग होते हैं तो दूसरी तरफ ग्रामीणों द्वारा चुने गये प्रतिनिधि होते हैं। ये पाँच से सात लोगों का चुनाव माघ पूजा के पश्चात उसी दिन करते हैं एवं कार्यभार का हस्तान्तरण उसी दिन या एक सप्ताह के भीतर या फल्गुन बाहापर्व के समय हुआ करते हैं। संतालों के चुने गये प्रथम व्यक्ति ग्रामप्रधान या 'माझी' हुआ करते हैं। सम्पूर्ण गाँव का सम्पूर्ण सांस्कृतिक कार्य उन्हीं की देख रेख में सम्पन्न किये जाते हैं। दूसरे व्यक्ति ग्रामप्रधान या माझी के सहायक पाराणिक हुआ करते हैं। पाराणिक की सहायता 'जोगमाझी' करते हैं तथा जोगमाझी की सहायता 'गोडेत' या डकुवा हुआ करते हैं। गाँव के और एक प्रधान व्यक्ति ग्रामीण द्वारा चुने गये या संताल देवी-देवता द्वारा चुने गये ग्रामपुजारी या नायके होते हैं। नायके बाबा के सहायक कुडाम नायके हुआ करते हैं। ये सारे गाँव के प्रमुख पंच व्यक्ति एवं गाँव के सबका सब ग्रामीण व्यक्ति होते हैं। कोई भी चुने गये प्रतिनिधियों का कार्यकाल एक वर्ष सुनिश्चित रहता है। यदि कोई ग्रामीण पंच पर बना रहना चाहते हैं तो फिर भी वर्ष के अंत में नवीकरण हेतु शामिल होना पड़ता है अन्यथा नये लोगों को चुना जाता है। इसप्रकार संताल समाज आदिकाल से स्वयं का स्वयं द्वारा स्वयं के लिए शासन सत्ता को चलाते आ रहे हैं।

संताल में शासन व्यवस्था ग्रामीण स्तर से शुरु होकर क्षेत्र विशेष में 'क्षेत्र परगनैत' या 'तरफ पारगाना' हुआ करते हैं। इसका सीमांकन 10/12/15 कि०मी० क्षेत्रफल में होते हैं। इससे ऊपर या बड़ा आकार 'पिड़ पारगाना' जो आजकल प्रखण्ड स्तर के होते हैं। अंतिम जिला या प्रांत स्तर के देश या 'दिसोप पारगाना' हुआ करते हैं। संताल के न्यायिक व्यवस्था हेतु ग्रामीण माझी से शुरु होकर क्षेत्र या देश- दिसोम स्तर पर सर्वोच्च न्यायालय उनका 'लो बीर सेंदरा' (लो बीर शिकार) होते हैं। इनके विचार या न्याय व्यवस्था में धार्मिक भावना सर्वोपरि है। अर्थात संताल विधान न्यायाधिसों उपयुक्त बातों को सर्वसम्मत मान लिया जाता है एवं समूहों में सुनवाई किये जाते हैं।

संताल का प्रथम माह फाल्गुन माह माना जाता है तो अंतिम माह माघ को मानते हैं ये माह गणना संपूर्ण प्राकृतिक एवं कृषि आधारित हुआ करते हैं। संताली माह गणना को चन्द्र आधारित गणना को प्रधान माना जाता है ये प्राय: समयन्तराल में 29/30 दिनों का हुआ करते हैं और एक वर्ष में 355 दिनों का हुआ करते हैं। सूर्य गणना के आधार पर दोनों का सामंजस्य 10/20/30 दिनों की अन्तराल में बारह माह में अढ़ाई/तीन/चार वर्षों के अन्तराल में पुराने स्थान पर पहुँच कर अविचल, अविराम चलते रहते हैं।

संताल प्राकृतिक नियमों के आधार पर चलने वाले जनजाति हैं। इसी क्रम में कहा जाय तो गैर संताल या हिन्दू-मुस्लिम-ईसाई आदि, संताल से सम्पूर्ण रूप से अलग एवं भिन्न हैं। संतालों का कालक्रम में हिन्दू या अन्य दिकुओं से समय-समय पर लड़ाई-झगड़ा, युद्ध, हिंसा, आक्रमण होता आया है। कभी दिकु जीते तो कभी संताल। अधिकांशत: संतालों का जीत हुआ करता था। हिन्दू या दिकु जब संताल से लड़ाई-झगड़ा या युद्ध, दंगा, फसाद आदि हुआ करता था तो संताल स्त्री-पुरुष एक जैसा लड़ने की क्षमता रखने के कारण प्राय: दिकुओं पर संताल जीत हासिल किया करते थे। दिकु लोग जब बार-बार हार का सामना करते थे तो बाद में इसे समझने का प्रयास किया एवं समीक्षा भी किया।

संताल के बारह माह में छः-छः ऋतु जैसे- निरोन (बसंत), सिलु (गर्मी), दाक्-जापुद (वर्षा), हेमाल (गीला), शिशिर (शिशित) और राबां (जाड़ा) हुआ करते हैं। यही ऋतु सबों के लिए प्राय: एक जैसा हैं। संताल में प्रथम माह- फाल्गुन या बाहा बोंगा (माह) है जिसे मार्च माना जा सकता है इसी प्रकार क्रम में - संताल माह- चात, बायसत, झेट, आसाड़, सान, भादर, दोंसाय, सोहोराय, पुस, माघ (माग) बारह माह हैं। प्राय: सभी माह के साथ कुछ न कुछ आदिकाल से आदिवासी पर्व या त्योहार बने या लगे हुए हैं। ये सारे पर्व-त्योहार कृषि एवं सुरक्षा संस्कार या सभ्यता से जुड़ा हुआ है। फागुन के साथ या फागुन-चात के साथ संताल बाहा पर्व एवं कृषि बुनाई हेतु देवी-देवताओं का अनुमोदन अपेक्षित माना जाता है

बायसात (मई) माह में बाहा के वृहत विकल्प पर्व माकमोड़ पूर्णिमा के समय सम्पन्न किये जाते हैं। और (जून) माह पानी संकट का काल है इसलिए इसक वर्षा की कामना-पानी संकट दूर करने हेतु और पूर्णिमा के समय 'दाक सेंदुरा' पूजा पाठ व सामूहिक खोज किया जाता है। आसाढ़ (जुलाई) में वर्षा शुरु एवं तेज हो जाता है एवं कृषि कार्य बुनाई-चारा रोना चरम एवं धान गाछी (चारा) रोपन शुरु करने के पूर्व संताल अपनी देवी-देवताओं का अनुमोदन एवं पूजा-पाठ कर कुशल-मंगल कृषि कार्य सम्पन्न कर पाने हेतु आह्वान करते हैं। किसी प्रकार के अनिष्ट न हो की भी आराधना करते हैं। सानु (अगस्त) माह में धान-गाछी रोपाई, निराई-गुड़ाई कार्य हेतु एवं रोम्हा पर्व पूर्णिमा के समय मनाने हेतु सम्पन्न किये जाते हैं। इसके बाद वाली माह-भादर (सितम्बर) हुआ करता है। नया धान-शष्या का भी गृह एवं सामूहिक देवी देवताओं को भी अर्पण करते हैं एवं इस समय पूर्णिमा के समय ही जान्ताड़ पर्व स्थानीय देवी-देवताओं का अनुमोदन एवं पूजा-पाठ सम्पन्न किया जाता है। दाँसाय (अक्टूबर) यादगार भ्रमण हेतु दाँसाय माह के प्रथम दिन से सप्तम दिनों तक अपहृत-आयन-काजल (दो संताल वीर योद्धा व सुंदरी कन्या रक्षक पुरुष (विबी व दुर्गा)) आदि के खोज-तलाश हेतु गाँव-गाँव दूर-दराज तक हाय-हाय राग अलाप कर भ्रमण करते हैं साथ में आपसी सहयोग हेतु भिक्षाटन भी करते हैं। संतालों में बड़ी श्रद्धा एवं भक्ति के साथ संताल गुरु-चेला व खोज तलासी व्यक्तियों स्वागत एवं विदाई दी जाती है। सोहराय (नवम्बर) को माह के पूर्णिमा के समय मनाते हैं। आँधाड़ (दिसम्बर) माह में पूर्णिमा के समय करम पर्व/ दशन/ दुरमी/ जाहेर डाँगरी आदि मनाते हैं। पुस (जनवरी) के दिकु संक्रान्ति (साकरात) के समय-पिठा-लेटे खान-पान होता है। माग/माघ (फरवरी) के समय कृषि कार्य समाप्त के साथ संताल सांस्कृतिक गतिविधि समाप्त का भी माह होता है।

संताल एवं दिकुओं (हिन्दु, मुस्लिम, ईसाई, व अन्य (जैन)) में आदिकाल से अर्थात् ईस्वी पूर्व 1500–2500/3000 वर्ष पूर्व या ~~लाख डेढ़ अढ़ाई तीन~~ 50/60 लाख वर्ष पूर्व से वर्तमान समय तक अल्प या विरोधाभास सांस्कृतिक क्रिया-कलाप रहे हैं। दोनों में सम्पूर्ण रूप से सांस्कृतिक अन्तर पाये जाते हैं। ये सांस्कृतिक गति-विधि फागुन (मार्च) में शुरु होकर माग/माघ (फरवरी) में वार्षिक पंचांग शुरु एवं समाप्त होते हैं। फाल्गुन (मार्च) माह में संताल का बाहा पर्व प्राकृतिक फूल साल एवं महुआ प्रतिक स्वरूप या आर्थिक संबंध के साथ

सांस्कृतिक अनुष्ठान शुरू होता है इसी समय संताल युवा पुरुष एवं स्त्रियों के बीच बाह वर्ष के समय एक दूसरे को गीतों का बोछार देकर एक दूसरे को आकर्षित करते हैं एवं इसी माह से ही आपसी विवाह संबंध भी शुरू किया जाता है। संताल में वैधानिक विवाह भाद्र एवं माग/माघ में असुभ व बर्जित माना जाता है।

इसी कड़ी में सांस्कृतिक गतिविधि के अनुसार संताल आदिपुरुष मयसा सोरेन या हुडुड़/हुदुर दुर्गा का प्रेम लिला फारस राजा-परेश की कन्या 'सारो' का शुरू होता है और कृषि कार्य के साथ प्रेम लिला प्रसार होकर माह पर माह आश्विन (संताल माह दाँसाय) में संताल आयन-काजल कन्या व उनके खोजी-तलाश में दिबी-दुर्गा का भी अपहरण एवं घात हमला कर मारदिया जाता है। दाँसाय (आश्विन) माह में संताल संस्कृति के अनुसार उन सबों का खोज-तलाश-यादगार भ्रमण सम्पन्न किया जाता है। सोहराय (कार्तिक) माह में पूर्णिमा के पूर्व या समय को संताल सारी सोहराय (वास्तविक पुरुषत्व शक्ति नारी प्रेम शक्ति में वैधानिक पाँच साल अन्तराल समागम) सम्पन्न किया जाता है अग्राहन-पोष माह में राजा-रानी की कहानी लिला के तहत रानी (सारो) राजा (हुडुड़ दुर्गा/मयसा/महिसासुर/रक्तबीज) को मार देना चाहते थे पर रानी पराजय हो जाती है और राजा जय या विजय होता है। राजा के मरण शोक व्योरा से उनका बहन राजा को जीत दिलाती है। अर्थात् संक्रान्ति खान-पान के बाद रानी रूपी केला गाछ पर राजा रूपी संताल पुरुष लोगा रानी (सारो) की छाती में तीर चलाते हैं। इसी प्रकार पोष के अन्त या माग/माघ के प्रथम सप्ताह में तृतीय या पंचमी को "बोंगाही बामुत बोंगा बध"/जुगनी (अत्याचारी) का वध होता है। संताल माग/माघ पूजा संपन्न कर अंतिम रविवार तक उसे दूसरे गाँव सीमा को-टूयसूप, राख होंड़ी/राख काराही, दुया-फुया चालनी, दुय-फुय डाला-खाँची, दुया-फुया टोंका आदि का रूप या प्रतिक मानकर बाँस लम्बी डण्डा में पहनाकर तथा घर-घर-डार-डार काली मुर्गी बच्ची को जोगनी देवी मानकर उसे बाहरी सीमा ले पहुंचाते हैं। उसे पहुंचाने वाले युवा वर्ग व लोग सूर्यस्थ के पुर्व को अपना घर वापस नहीं लौटते हैं। क्षेत्र विशेष में उस दिन अपना घर में खान-पान चूल्हा जलाना वर्जित माना जाता है। बाहर लोग भोजन बनाकर खाते हैं। कुछ क्षेत्र में घर पर ही बनाया जाता है साम के समय गाँव बाहर जाकर पूजा पाठ कर घर वापस आकर खाते पीते हैं।

 Hembram

इस प्रकार संक्षेप में हम देखते है कि संताल वीरपुरुष-योद्धा/
रक्तबीज का प्रेम लिला सारो के साथ फागुन वसंत में शुरु होता
है और बीच में कृषि कार्य के साथ-साथ प्रेम लिला चलता है। संताल योद्धा
रक्तबीज/मयसासुर/महिसासुर/ दुर्गा को वध करने का सारो देवी
की योजना अन्ततः असफल हो जाती है और उसे ही संक्रान्ती के समय या
उसके बाद माग/माघ माह के तृतीय/पंचमी दिन को बागाही वध होता है
अर्थात रानी रुपी सारो देवी/जुगनी देवी को संताल द्वारा वध किया जाता है।
उस अत्याचारी वेश्यावृत्ति करनेवाली सारो की मंशा को पानी फेर दिया
जाता है। संताल सदा से ही दिकुओं/गैर संताल के विपरित संस्कृति
वाले है। हिन्दु या दिकुओं में माँ दुर्गा/सारदिय को मयसासुर पर
विजय दिखाया जाता है पर संताल उसे नहीं स्वीकारें है। संताल संस्कृति
सोहोरआय संस्कृति के अनुसार संताल में पाँच साल के अन्तराल में सारी
सोहोराय - महिला योनी की पूजा पुरुष लिंग के साथ किया जाता है एवं
महिला योनी एवं पुरुष लिंग के सहवास क्रिया को गाँव के कुल्ही/गली
में सुबह-दोपहर के पूर्व संस्कार आदिकाल से अब तक करते हुए आ रहे
है। इससे विदित होता है कि सारो हार गयी है। सारो का वध
होता है जो माग/माघ पूजा के रुप में संताल में संपन्न होता है। वेश्यावृत्ति
प्रवृत्ति वाली सारो को योगनी/जुगनी या मानवभक्षि मानकर उसका
वध या विनास कर संताल अपने आप को धन्य या पापी का संहार
मानते है। दिकु संस्कृति एवं संताल संस्कृति किसी एक में विपरित
या उल्टा नहीं रहा है बल्कि दो सो से अधिक क्रिया-कलापों
में उल्टा है। सांस्कृतिक दृष्टि में संताल पूर्वज पहले से अब तक
हिन्दु या दिकुओं का उल्टा ही बनाये रखे है।

संताल बड़ा ही कट्टर जनजाती है कभी हार स्वीकार नहीं
किया है। साल वृक्ष जैसा एक भी ठुंठ जैसा बचे रहने से फिर से
पनप जाते है। दाँसाय भ्रमण के समय उसके दिमाग को भ्रमित करने का
दिकुओं द्वारा परम्परा चला आ रहा है। उसी प्रकार संताल में भी उसका
विपरित संस्कार प्राचीन काल से अभी तक बना हुआ है। Hembram